शिवनारायण गौर

मासाब

सफेद पजामा-कुर्ता पहने भीड़ में अलग-से नज़र आने वाले वे एक प्रायमरी स्कूल के मासाब थे। वे भोपाल के एक सरकारी स्कूल में पढ़ाते थे। मासाब के करीब पचास साल पहले के चर्चे आज भी उनके छात्र-छात्राओं की जुबान पर होते हैं। उनकी कक्षा हर समय भरी रहती। अगर कोई स्कूल न आ पाता तो अगले दिन मासाब की कक्षा के बारे में ज़रूर पूछता! उन की कक्षा बड़े मज़े की होती थी। वे तरह-तरह के किस्से सुनाते थे। मासाब जब नौकरी से सेवा निवृत्त हुए तो उनसे एक बच्चे ने पूछा, "मासाब आप साल भर हमें पढ़ाते हैं। कभी छुट्टी पर नहीं जाते तो फिर यात्रा के तमाम अनुभव हमें कहाँ से सुनाते हैं।" मासाब ने अपनी असलियत बयाँ की...

मैं गर्मी की दो महीने की छुट्टी में मैं केवल यात्राएँ ही करता था। अप्रैल में छुट्टी शुरू होते ही मैं जो एक झोला लेकर निकलता तो फिर जुलाई में स्कूल खुलने के समय ही वापस लौटता। 70 रुपए महीने की तंखवाह में पूरे दो महीने दूर-दूर तक घूमना बड़ा मुश्किल था। लेकिन घूमने के मेरे शौक ने इसका रास्ता निकाल ही लिया। मैंने एक जोड़ी भगवा कपड़ा सिलवाए और उनके सहारे कई साल तक यात्राएँ कीं। कपड़े जितने पुराने होते गए यात्राएँ उतनी ही लम्बी और सुखद होती गईं।

असल में मासाब भगवा कपड़े पहनकर एक फटे झोले में अच्छे कपड़े और ज़रूरी सामान लेकर रेलगाड़ी में बैठ जाते। टिकिट-विकिट का कोई झंझट नहीं। लोग उन्हें बाबा समझते। इससे डिब्बे में ना केवल जगह मिल जाती बल्कि खाने-पीने का जुगाड़ भी हो जाता। वैसे तो कोई भी टिकिट चेकर उनसे टिकिट नहीं माँगता पर अगर कोई ज़िद पर अड़ जाता तो सज़ा के तौर पर उन्हें ट्रेन से उतार दिया जाता। इससे मासाब के मिशन पर कोई असर नहीं पड़ता। उनका उद्देश्य तो घूमना ही था। जिस स्टेशन पर उन्हें उतारा जाता वे वही शहर घूम लेते। भगवा कपड़े बदलकर वे दिनभर घूमते। रात होते ही अगली गाड़ी पकड़कर आगे की यात्रा पर निकल जाते। हाँ, अगली यात्रा शुरू करने से पहले भगवा कपड़े ज़रूर पहन लेते। यही कपड़े तो उनकी यात्रा की टिकिट थी।

वैसे तो वे खाने-पीने लायक पैसे घर से लेकर निकलते थे पर कई बार लोग कपड़ों को देखकर उनके खाने-पीने की व्यवस्था भी कर देते थे। सालों तक इस तरह की गई यात्राओं से मासाब के पास अनुभवों का खज़ाना जमा हो गया था। जहाँ-जहाँ भी रेलगाड़ी चलती वो सारा इलाका उनका घूमा होता। पढ़ाते वक्त वे बच्चों से इन अनुभवों को साझा करते। मासाब आज इस दुनिया में नहीं हैं लेकिन उनके छात्र-छात्राएँ उनके अनुभवों को याद करते और खुश होते हैं।

मेरा पन्ना

तरुण, होशंगाबाद, म.प्र.

श्रेया, पाँचवीं, बैतूल, म.प्र.